E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2023; 5(12): 53-55
Received: 25-10-2023
Accepted: 30-11-2023

नंदिता साहू
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

डॉ. आनन्द कुमार सिंह
शोध–निर्देशक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

Corresponding Author:
नंदिता साहू
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

अज्ञेय के यात्रा–साहित्य में विविधता

नंदिता साहू, डॉ. आनन्द कुमार सिंह

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2023.v5.i12a.1119

सारांश
अज्ञेय सदैव यात्रा पर ही रहे, पर जिन तीन यात्रा संस्मरणों के कारण वे चर्चा, बहस और विवाद के केन्द्र में रहे वे हैं– 'अरे यायावर रहेगा याद?' (1953), 'एक बूंद सहसा उछली' (1960) और 'जय जानकी जीवन यात्रा' (1983)। 'अरे यायावर रहेगा याद?' कहने को तो भारत के पूर्वी सीमान्त से लेकर उत्तर–पश्चिम सीमान्त तक की यात्रा का संस्मरणात्मक–वृत्तान्त है, पर इसमें उत्तर–दक्षिण के क्षेत्र भी बीच–बीच में झलक दिखता जाये तो कोई आश्चर्य नहीं। अपनी ही कविता–पंक्ति को आधार बनाकर अज्ञेय ने इसका नामकरण तो किया ही, मनुष्य और प्रकृति के बीच अन्तर–सम्बन्धों को व्याख्यायित–विश्लेषित करने के पूर्व पुस्तक के प्रारंभ में ही वह कविता भी उकेर दी– 'पार्श्व गिरि का नम्र, चीड़ों में। डगर चढ़ती उमंगों–सी। बिछी पैरों में नदी, ज्यों दर्द की रेखा। विहग–शिशु मौन नीड़ों में। मैंने आँख भर देखा। दिया मन को दिलासा : पुनः आऊँगा। भले ही बरस दिन–अनगिन युगों के बाद। क्षितिज ने पलक–सी खोली। तमक कर दामिनी बोली : अरे यायावर! रहेगा याद? 'एक बूँद सहसा उछली' विदेशी यात्राओं का वृत्तान्त है, जिसमें अज्ञेय ने स्विटजरलैण्ड, बर्लिन, पेरिस आदि के दर्शनीय स्थलों के साथ वहाँ के कवियों और लेखकों से अपनी मुलाकातों को रोचक अंदाज में पेश किया है। 'जय जानकी जीवन यात्रा' सीतामढ़ी से चित्रकूट तक की यात्रा है। अज्ञेय ने जो भी किया खुले दिल से किया। प्रयोग किया तो खुले दिल से किया, यात्राएँ कीं तो खुलकर कीं। उनके अन्तस् की प्रेरणा से ही बाह्य और अनवरत यात्राएँ सम्भव हुई।

कुटशब्दः अज्ञेय के यात्रा–साहित्य, अज्ञेय प्रकृति, परिवेश

प्रस्तावना
एक लम्बे अर्से तक अज्ञेय को विद्वानों का लेखक और कवियों का कवि कहने का फैशन रहा है। इस फैशनपरस्ती के समर्थको ने अज्ञेय के यात्रा– वृत्तान्तों पर गौर किया होता तो संज्ञा और विशेषण के मानदण्ड शायद वैसे न होते क्योंकि अपनी यात्राओं में अज्ञेय प्रकृति, परिवेश, जनता और संस्कृति के ज्यादा करीब दिखते हैं, न कि विद्वानों और बौद्धिकों के निकट। असल में हिन्दी जगत यात्रा– संस्मरणों को जबानी सुनने का अभ्यस्त तो प्रारम्भ से ही रहा है, पर लिखित तौर पर पढ़ने का उतना आदी नहीं। जबकि हकीकत यह है कि विश्व की तमाम चीजों को छोंछ–झाड़कर, खोज–बीन कर समाज के सामने लाने का श्रेय जुनूनी यात्रियों को ही जाता है। इस अर्थ में अज्ञेय की यात्राएँ सार्थक रही हैं, जुनूनी और आत्मीय भी। उनके यात्रा वृत्तान्त इतने साफ हैं कि उनमें प्रकृति की साँसों की आवा–जाही, संस्कृति का रंग–बिरंगापन, इतिहास का द्वन्द्व, भूगोल का अनगढ़ सौन्दर्य, मनुष्य की जद्दोजहद, परिवेश की नादान संवेदना आदि सब–कुछ को सहज ही देखा–सुना जा सकता है। इसे अज्ञेय की शैली की तरलता कह लें या शिल्प की कहनता, रिश्तों की प्रगाढ़ता का नाम दें या भाषा की जादूगरी जैसा मुहावरा। सब–कुछ का लेखा–जोखा इसी निष्कर्ष पर पहुँचायेगा कि अज्ञेय की यात्राओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, भले ही वह निजी जैसी दिखती हों, पर हैं वे सार्वजनीन, सजग और चौकन्नी। 'अरे यायावर रहेगा याद' के पाँचवें संस्करण की भूमिका में अज्ञेय ने स्वयं स्वीकारा कि 'भ्रमण या देशाटन केवल दृश्य–परिवर्तन या मनोरंजन न होकर सांस्कृतिक दृष्टि के विकास में भी योग दे, यही उसकी वास्तविक सफलता होती है। अपने यात्रा संस्मरणों में मेरा यह प्रयत्न रहा है कि उन यात्राओं के मेरी होने की बात उन्हें तात्कालिक अनुभव की प्रामाणिकता और टटकापन देने के लिए सामने आये नहीं तो वे वृत्तान्त एक समग्र दृष्टि को उभारने में ही योग दें जिससे भविष्यत् यात्री अपने–अपने अनुभव को और समृद्ध बना सकें।'[1]
जो धर्म, कर्म और मर्म का यायावर हो, वही यात्रा–वृत्तान्त लेखन का महारथी हो सकता है। अज्ञेय के इस मामले में महारत हासिल है। इस महारत में मौलिकता, व्यापकता और गम्भीरता है, इसलिए महारथी हैं अज्ञेय। काल की दीवार भेदकर भविष्य की झलक देखने–भर के लिए छेद बनानेवाले महारथी। वर्तमान के अँधेरे को अमोघ गति से भेदते, बिना सुरंग की दीवारों से टकराये बढ़े चले जानेवाले महारथी। तभी तो उनके यात्रा–संस्मरण पाठक को अनिर्वचनीय आनन्द प्रदान करते हैं।

ऐसे ही अनिर्वचनीय आनन्द प्रदान करनेवाले बहुस्तरीय गद्य के नमूने के लिए यह उद्धरण देखिये– 'यायावर को इस बार जो ट्रक मिला उसकी हालत बहुत अच्छी न थी। कहूँ कि उसमें एक टायर ही बस ऐसा था जिसका भरोसा किया जा सके, तो इसे मेरी आत्मश्लाघा न समझा जाये। इंजिन अठारह हजार मील रन कर चुका था और अठारह हजार फौजी मील कितने लम्बे होते हैं, वह भुक्तभोगी मिलिटरी गाड़ियाँ ही जानती हैं। काँच सब टूटे हुए थे, कारबुरेटर खराब था, तार गल गये थे, बैटरी बदलने लायक थी, डायनेमो बीच–बीच में चार्ज करना छोड़ देता था, ब्रेक कमजोर थे... तिस पर यायावर को रात में गाड़ी चलाने का व्यसन है... किन्तु इस ट्रक के साथ रात की दौड़ कैसे हो? यायावर को चिन्ता नहीं। वह गाड़ी स्वयं चलाता है, शुक्ल पक्ष की रातें हैं, उसके शरीर में शायद विटामिन कैरोटिन यों भी यथेष्ट है क्योंकि बत्ती जलाये बिना गाड़ी दौड़ाने में उसकी आँखों को कोई कष्ट नहीं होता। बल्कि यह स्निग्ध अँधेरा तो विचार का सहायक है– और चाँदनी में पूरा प्रदेश दीखता है जबकि बत्ती जलाने से केवल सड़क दीप्त हो उठती है और परिपार्श्व पर कालिख पुत जाती है।'[2] फक्कड़ान अंदाज के इस गद्य में बहुस्तरीयता है, व्यंग्य का पुट है, व्यवस्था की नोटिस है, पूर्व असम का सौन्दर्य है, यात्री का आत्मविश्वास है, चुनौती है और न जाने क्या–क्या है? हाँ– 'अँधेरा तो विचार का सहायक है' एक टांक की तरह है। पाठक भी थोड़ा ठहर कर इस 'अँधेरे' पर सोच–विचार कर ले। पाठक ही क्यों भटकनेवाली शक्तियाँ या उन शक्तियों के पागल दीवाने भी अज्ञेय को सुन लें– 'तिनसुकिया के आगे कोई वर्कशॉप नहीं है तो क्या हुआ? यायावर के पैर में चक्कर है, दिमाग में चक्कर है, भ्रमरी योग में उसने जन्म लिया है और सनीचर की साढ़े साती चल रही है– क्या भटकानेवाली इतनी शक्तियाँ उसकी रुकी गाड़ी को चला न देंगी?'[3] इस तरह ताल ठोककर बड़ी–बड़ी शक्तियों को चुनौती देनेवाला यात्री अज्ञेय के अलावा हिन्दी साहित्य में भला और कौन है? असल में अज्ञेय के जीवन में स्थितियाँ शुरू से ही ऐसी रहीं कि वे लगभग जंगली की तरह रहे। पिता जी की तरफ से बराबर इसका प्रोत्साहन भी था। वे चाहते थे कि उनकी सन्तान को किसी भी जंगल में या परिस्थिति में अकेला छोड़ दिया जाये तो भी वह स्वयं को सँभाल सके। बकौल अज्ञेय 'मैं साधारण भारतीय लेखक से अधिक परिश्रम करता हूँ– अधिक समय पढ़ने–लिखने में बिताता हूँ, अधिक समय आत्मप्रशिक्षण में, जिसमें मन का प्रशिक्षण, ज्ञानेंद्रियों का और हाथों का प्रशिक्षण भी शामिल है। मैं कपड़े सी लेता हूँ, जूते गाँठ लेता हूँ, फर्नीचर जोड़ लेता हूँ, मिठाई पकवान बना लेता हूँ, जिल्दबन्दी कर लेता हूँ, विलायती ढंग के बाल काट सकता हूँ, प्रेस मशीन चला लेता हूँ, फोटो खींचता हूँ, फिल्म और प्रिण्ट डेवलप कर लेता हूँ, फावड़ा, कुल्हाड़ी गैंती चला लेता हूँ, निराई कर लेता हूँ, बन्दूक पिस्तौल चला लेता हूँ, तैर लेता हूँ, क्रिकेट, टेनिस बैडमिण्टन खेल लेता हूँ। अधिकांश के सहारे आजीविका भी कमा लेता हूँ और जो नहीं जानता, वह सीखने को हमेशा तैयार रहता हूँ।'[4] भला ऐसे यायावर के मन में जंगल की पुकार क्यों न गूँजे? पहिये का पंक्चर बनाने के लिए वह कुन्दन सिंह पर क्यों निर्भर रहे? जब तक कुन्दन सिंह पत्थर लायेगा, तब तक यायावर पहिया बदल लेगा। सब डिबरियाँ खोलकर जब पहिया गिराया गया तब अपने बड़े फौजी बूटों को ढबर–ढबर बजाता हुआ दो पत्थर उठाये कुन्दन सिंह धुँध में अवतीर्ण हुआ। यायावर ने दाँत पीसकर कहा, ''मिल गये तुम्हें पत्थर?''[5] वह खीसें काढ़कर बोला, ''जी, जरा ठहर गया था।''[6] अब अज्ञेय की भाषा का सौन्दर्य देखिये। कुंदन सिंह को इस जवाब के पहले ही वह उसके चेहरे पर उभरे भाव का राज खोल देते हैं– 'उजड्डु के लिए मुसकान परमास्त्र है, वह मुसकान जो स्पष्ट बता देती है कि जब मुझ में अपना दोष समझने की ही बुद्धि नहीं तब आपका क्रोध कैसे समझूँ।''[7] नासमझ को नासमझ कहने का यही तो वात्स्यायनी तरीका है, जो औरों से भिन्न है। यह जो निगमनात्मक तरीका है, वह औरों के यहाँ निबन्ध में है, अज्ञेय (वात्स्यायन) के यहाँ यात्रा–संस्मरण में। एक साथ कई विधाओं को निभता हुआ देखना हो तो 'अरे यायावर रहेगा याद? में गहरे पैठकर देखिये। अज्ञेय ने दूसरे संस्करण की भूमिका बाँधते हुए कहा कि 'अरे यायावर रहेगा याद? जैसी पुस्तकों को उनसे मिलने वाली भौगोलिक अथवा प्रादेशिक जानकारी के लिए नहीं पढ़ा जायेगा? ऐसे यात्रा– संस्मरण 'टूरिस्ट गाइड' का स्थान लेने के लिए नहीं लिखे और पढ़े जाते। ऐसी पुस्तकों में प्रस्तुत ब्यौरा एक व्यक्ति की यात्रा का ब्यौरा होता है, और वह यात्रा जितनी बाहरी होती है उतनी ही भीतरी भी। यात्रा का विवरण जितना स्थूल भू–विस्तार से सम्बद्ध होता है उतना ही सूक्ष्म मानसिक भूगोल से भी। 'टूरिस्ट गाइड' के सहारे अनेक व्यक्ति एक ही यात्रा कर सकते हैं; यात्रा संस्मरण के सहारे की गयी प्रत्येक पाठकीय यात्रा भी उतनी ही विशिष्ट होती है जितनी लेखक की यात्रा रही। और प्रत्येक के लिए संस्मरण–लेखक के मानस में प्रवेश करना आवश्यक होता है। यही इस तरह के यात्रा– संस्मरणों की रोचकता का आधार हो सकता है।'[8] अज्ञेय चाहते थे कि उनके यात्रा वृत्तान्त एक समग्र दृष्टि उभारने में सहयोगी साबित हो ताकि भविष्यत् यात्री अपने–अपने अनुभव को और समृद्ध बना सकें। अज्ञेय का मानना था कि 'भ्रमण या देशाटन केवल दृश्य–परिवर्तन या मनोरंजन न होकर सांस्कृतिक दृष्टि के विकास में भी योग दे, यही उसकी वास्तविक सफलता होती है।'[9] 'अरे यायावर रहेगा याद?' की एक अद्‌भुत विशेषता यह है कि अज्ञेय ने जिन स्थानों की यात्रा की उसका संस्मरणोल्लेख तो वह करते ही हैं, जहाँ नहीं गये उससे भी पाठक को अवगत कराना नहीं भूलते और यह भी बताना नहीं भूलते कि वहाँ क्यों नहीं गये। पत्रकारिता जगत् में प्रचलित यह मशहूर शेर याद आता है– 'वो नहीं आगे ये गम नहीं कासिदध ये तो बता कि तर्जे इनकार क्या था? अज्ञेय को भी तर्जे इनकार बताना जरूरी मालूम होता है क्योंकि उनका मकसद सांस्कृतिक दृष्टि के विकास में योग देना भी है। वह जिस राह से गुजरते हैं यदि केवल उसका वृत्तान्त बखानते हैं तो यह एकरेखीय बात होगी। और संस्कृति एकरेखीय तो होती नहीं, बहुरेखीय होती है, बहुविध होती है, समग्र होती है। अज्ञेय आस–पड़ोस, दूर–दराज को भी न छूकर छू लेते हैं। इसे अनछुआ–छुअन या अस्पर्श–संस्पर्श कह लें तो कोई हर्ज नहीं। एक टुकड़ा देखिये, फिर अन्य टुकड़े देखिये– 'आसनसोल से बढ़ी'[10] – 110 मील। राह की एक ओर पार्श्वनाथ गिरि[11] को छोड़ा।... बढ़ी से बढ़े, पर गया[12] नहीं गये, डेहरी– सोन का रेल पुल पार करके अलीनगर पहुँचे। अलीनगर का बँगला मुगलसराय स्टेशन से दो मील पहले पड़ता है। बनारस जाया जा सकता था, पर रास्ते में नाव का पुल पड़ता है, जिस पर न जाने ट्रक जा सकें या नहींय न गये तो रेल के पुल से पार करना होगा और घण्टों लगेंगे। फिर रात को शहर में पहुँचने का आतंक तो है ही,... बनारस– इलाहाबाद। इलाहाबाद में भी कानवाई ठहराने की जगह नहीं भी, और दौड़ भी छोटी रह जाती, अतः पचीस–एक मील और जा कर मूरतगंज के बंगले में अड्डा जमाया।'[13]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि यही तो अज्ञेय–शैली है न जाकर भी जाना और जाकर भी न जाना, लेकिन यह बात नोट करने की है कि डेहरी–ऑन–सोन पहुँचने के लिए अज्ञेय को औरंगाबाद शहर के बीचों–बीच से गुजरना पड़ा होगा, पर उसकी चर्चा नहीं है। आगे चलकर औरंगाबाद का उन्होंने कई बार उल्लेख किया है और यहाँ आये भी। यह तब सम्भव हुआ, जब औरंगाबाद के साहित्यकार शंकरदयाल सिंह से उनकी निकटता

बढ़ी। इस निकटता का परिणाम यह हुआ कि अज्ञेय की प्रतिमा देश में कहीं मिले–न–मिले, औरंगाबाद में जरूर मिलती है। शंकरदयाल सिंह ने अपने गाँव भवानीपुर में अज्ञेय की प्रतिमा स्थापित की, जिसका अनावरण डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ने अज्ञेय के जन्मदिन पर 7 मार्च, 1991 को किया था। अगर अज्ञेय इस दिन होते तो 80 के होते। प्रतिमा के नीचे लगे पत्थर पर लिखा है– 'अज्ञेय अरे यायावर रहेगा याद।' अज्ञेय ने सन् 1953 में 'अरे यायावर रहेगा याद?' प्रकाशित कराया था तो प्रश्नवाचक चिह्न लगाकर मानो पूछना चाहा था कि याद रहेगा अथवा नहीं? शंकरदयाल सिंह ने शिलापट्ट से प्रश्नवाचक चिह्न हटाकर मानो बताना चाहा कि हाँ अवश्य रहेगा याद। हम अभी उतने भी कृतघ्न नहीं हुए हैं कि अपने बीच से गुजरने वाले यात्री को याद न रख सकें। हम दूर के यात्री ह्वेनसांग, फाह्यान, इब्नतूता को याद रखे हुए हैं, अज्ञेय तो हमारे अत्यन्त निकट के यात्री रहे हैं।

सन्दर्भ

1. अज्ञेय, अरे यायावर रहेगा याद? राजकमल प्रकाशन, पेपर बैंक संस्करण 2015, पृ.7 (यह पुस्तक सन् 1953 में पहली बार सरस्वती प्रेस, बनारस से छपी)
2. 'अज्ञेय', एक टायर की राम कहानी, अरे यायावर रहेगा याद, राजकमल प्रकाशन, पेपरबैक संस्करण 2015, पृ. 16–17
3. वही, पृ. 17
4. अज्ञेय, स्वाधीन हूँ क्योंकि स्वाधीनकर्मी हूँ, प्रस्तुति क्षेमचन्द्र, अहा! जिंदगी, जयपुर, अप्रैल 2016, पृ. 78
5. अज्ञेय, एक टायर की राम कहानी, अरे यायावर रहेगा याद, राजकमल प्रकाशन, पेपरबैक संस्करण 2015, पृ. 22
6. वही, पृ. 23
7. वही, पृ. 23
8. वही, पृ. 10
9. वहीं, पृ. 7 (पाँचवें संस्करण की भूमिका)
10. अज्ञेय ने जिस स्थान को बढ़ी लिखा है, वह अब बरही नाम से जाना जाता है।
11. बरही से पार्श्वनाथ मुश्किल से आधे घण्टे में पहुँचा जा सकता था। जैन धर्म का तीर्थ पार्श्वनाथ रमणीक जगह है।
12. अगर अज्ञेय गया जाते तो उन्हें जी.टी. रोड (अब एन.एच.2) से तकरीबन 27 किमी. उत्तर दिशा में जाना पड़ता।
13. अज्ञेय, एक टायर की रामकहानी, अरे यायावर रहेगा याद, राजकमल प्रकाशन, पेपर बैक संस्करण 2015, पृ. 33–34